International Journal of Sanskrit Research 2015; 1(3): 67-69

International Journal of Sanskrit Research

अनन्ता

ISSN: 2394-7519
IJSR 2015; 1(3): 67-69
© 2015 IJSR
www.anantaajournal.com
Received: 26-01-2015
Accepted: 28-02-2015

डॉ. कामना पण्ड्या
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
किशोरी रमण स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, मथुरा, भारत

Correspondence
डॉ. कामना पण्ड्या
एसोसिएट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग
किशोरी रमण स्नातकोत्तर
महाविद्यालय, मथुरा, भारत

प्रसाद साहित्य में लोक मंगल की वरेण्य आशा

डॉ. कामना पण्ड्या

प्रस्तावना

हिन्दी साहित्य जिन साहित्यकारों के बल पर विश्व साहित्य के सन्मुख सिर उठा कर खड़ा है, उन विलक्षण साहित्यकारों में श्री जयशंकर प्रसाद का नाम अग्रगण्य है। प्रसाद आधुनिक युग के सर्वाधिक विचारवान – तेजस्वी व्यक्तित्व है। छायावाद के इस पुरस्कर्ता ने अपनी लेखनी से जिस भी विधा को छुआ उस विधा में शीर्षस्थ ही रहे। कवि, कहानीकार, एकांकीकार, नाटककार और उपन्यासकार प्रसाद अपने बहुमुखी प्रतिभा के कारण 'भारतेन्दु' का अवतार माने गये। इन सभी रूपों का प्रसाद ने नयी गरिमा और ऊँचाईयां प्रदान की। हिन्दी में प्रसाद ने अपनी विलक्षण रचना–शैली की ऐसी छाप छोड़ी कि न जाने कितने रचनाकारों ने उनका अनुगमन किया और उनकी शैली 'प्रसादीय शैली' के नाम से जानी गयी।

विलक्षण और मौलिक प्रतिभा के धनी प्रसाद का बहुमुखी कृतित्व उनकी अतुलनीय प्रतिभा का परिचायक है। जो विद्वान छायावादियों पर पलायनवादी होने का आक्षेप लगाते है, प्रसाद का कृतित्व उन सबका प्रतिउत्तर है। उनका साहित्य सच्चे साहित्य के समस्त गुणों का समुच्चय है। अपने साहित्य द्वारा उन्होंने 'सत्यम–शिवम–सुन्दरम की स्थापना का स्तुत्य प्रयास किया है। वे साहित्य को श्रेय और प्रेय का समन्वित रूप मानते हैं उन का समस्त साहित्य भारतीय जीवन दर्शन और चिन्तन परम्परा, मानवता के उज्ज्वल भविष्य की दीप्तमान आभा और लोकमंगल की वरेण्य आशा का मूर्त रूप है।

प्रसाद साहित्य के गम्भीर अध्येताओं द्वारा यह सहज ही समझा जा सकता है कि प्रसाद अपने युग और समाज के प्रति कितने जागरूक थे, एक सच्चा साहित्यकार कभी भी मात्र कल्पना बिहारी नहीं हो सकता। प्रसाद का साहित्य उनके समाजोन्मुख होने का साक्षात् प्रमाण है वे युग प्रवर्तक साहित्यकार हैं। उन्होंने अतीत और वर्तमान जीवन की सारगर्भित झांकी अपने साहित्य द्वारा प्रस्तुत की है उससे उनकी सामाजिक प्रतिबद्धता का आंकलन किया जा सकता है।

समाज, उसकी विभिन्न संस्थाए, और बाह्य व्यवस्था के लिए बनायी गयी विभिन्न शासन प्रणालियाँ अन्ततः व्यक्ति की ही सुख–सुविधा, स्वातन्त्र्य और आनंदानुभूति की साधन मात्र है। प्रसाद की दृष्टि में व्यक्ति की उन्नति से सही समाजोन्नति होती है। कंकाल में समाज की विकृतियों विद्रूपताओं के उद्घाटन द्वारा वह एक स्वस्थ, समुन्नत एवं उर्ध्वगामी समाज की रचना चाहते हैं। वह उस समाज व्यवस्था को पलट देना चाहते हैं जो व्यक्ति को पिशाच बना देती है, अथवा उसे एक निर्जीव कठपुतली बना देती है। प्रतिध्वनि में वह कहते हैं ''हमारी शुद्ध आत्मा में किसने विष मिला दिया है, किसने कपट चातुरी प्रवंचना सिखायी है। इस पैशाचिक समाज ने इसे छोड़ना होगा।'' [1]

समय के साथ परिवर्तन विकास का द्योतक है। समाज के सर्वांगीण विकास की पहली शर्त है कि समाज से जड़ताएं एवं कुरीतियां समाप्त हों। अज्ञान, आडंबर, अशिक्षा, मिथ्या रक्ताभिमान सारी विद्रूपताएँ जब तक समाप्त नहीं होंगी तब तक कैसी भी समाजोन्नति नहीं हो सकती जब तक पुरानी अस्वस्थ परम्पराओं का समूल नाश नहीं होगा तब तक स्वस्थ सम्पन्न समाज की कल्पना व्यर्थ है, इसके लिए प्रत्येक व्यक्ति को प्रयास करना होगा। वे 'कंकाल' में इसके लिए आह्वान करते है ''भगवान की भूमि भारत में स्त्रियों पर तथा मनुष्यों को पतित बनाकर बड़ा अन्याय हो रहा है। करोड़ों मनुष्य जंगल में अभी पशु जीवन बिता रहे हैं। स्त्रियां विपथ पर जाने के लिए बाध्य की जाती हैं, तुमको उनका पक्ष लेकर लड़ना होगा।'' [2]

समाज में रहकर ही व्यक्तित्व का विकास होता है, अतः व्यक्ति स्वातंत्र्य पर बल देने वाले प्रसाद कभी भी समाज के स्वस्थ बंधनों और मर्यादाओं की अवहेलना नहीं करते स्वस्थ समाज का निर्माण व्यक्ति का कर्त्तव्य है तो व्यक्ति – स्वातंत्र्य और सुरक्षा का दायित्व समाज का है ''सच्चा वेदान्त व्यावहारिक है। वह जीवन–समुद्र की आत्मा को उसकी सम्पूर्ण विभूतियों के साथ समझता है। भारतीय आत्मवाद के मूल में व्यक्तिवाद है किन्तु उसका रहस्य है

समाजवाद की रूढ़ियों से व्यक्ति की स्वतन्त्रता की रक्षा करना और व्यक्ति की स्वतंत्रता का अर्थ है व्यक्ति समता की प्रतिष्ठा जिसमें समझौता अनिवार्य है।'' (तितली) [3]

व्यक्ति के सुख स्वातंत्र्य के प्रति 'प्रसाद' आद्यन्त आग्रह है पर, समाज के माध्यम से ही वे यह चाहते हैं क्योंकि व्यक्ति जीवन के ये महान् मूल्य जब तक समाज सापेक्ष न हो महत्वहीन हैं, वे तो सबका सुख चाहनेवाली औदार्यमना ऋषिमेधा से सम्पन्न है –

औरों को हँसते देखो मनु, खुद हंसो और सुख पाओ।
अपने मन को विस्तृत कर लो, सबको सुखी बनाओ।।
(कामायनी)

प्रसाद की आँखों में सुखी और स्वतन्त्र भावी मानव समाज का एक अभिनव मोहक चित्र बता है। वे स्वतंत्रता समता और बंधुत्व में गहन आस्था रखते हैं। सामाजिक नियमों व मर्यादाओं का उल्लंघन उन्हें स्वीकार नहीं किन्तु जड़ परम्पराओं का पोषण भी नहीं करते।

आज जिस स्त्री–विमर्श की चर्चा हर ओर हो रही है वहीं स्त्री प्रसाद साहित्य के सर्वाधिक प्रबल पक्षों में से एक है। यह सही है कि उनका नारी सम्बन्धी दृष्टिकोण आदर्शात्मक है। उनके विचार में नारी सर्वमंगला कल्याणी शक्ति है। जननी, प्रथम गुरू, समाज का आधार स्तम्भ, राष्ट्र की शक्ति और धर्म की साकार ज्योति है। प्रसाद ने जहां उसके उज्ज्वल पक्ष का चित्रण कर समाज में आदर्श स्थापना की है तो वहीं विवश, असहाय, बंदी नारी का नीरव क्रन्दन भी सुना है और उसकी मुक्ति कामना भी की है 'ध्रुवस्वामिनी' कदाचित प्रसाद साहित्य के अविस्मरणीय पात्रों में से एक हैं। क्लीब–दुराचारी एवं पतित अपने पति रामगुप्त से उसका विद्रोह और नवजीवन, स्वतंत्रता–अस्मिता के लिए उसका संघर्ष प्रसाद की नारी विषयक दृष्टि का सशक्त प्रमाण है – ''पुरूषों ने स्त्रियों को अपने पशु सम्पत्ति समझकर उन पर अत्याचार करने का अभ्यास बना लिया है, वह मेरे साथ नहीं चल सकता। यदि तुम मेरी रक्षा नहीं कर सकते, अपने कुल की मर्यादा, नारी का गौरव नहीं बचा सकते, तो मुझे बेच भी नहीं सकते।'' [4] उनकी नारी पुरूष से शाश्वत प्रश्न उठाती है और उनके समाधान के लिए प्रस्तुत भी होती है।

वास्तव में प्रसाद समाज में होने वाले समस्त परिवर्तनों को व्यापक रूप से देखते हैं और उनके प्रतिफलों को भी समझते हैं। समाज के कल्याणार्थ उनमें उतनी ही बेचैनी है जितनी प्रेमचन्द में थी या जितनी एक सजग और कर्तव्यनिष्ठ साहित्यकार में होनी चाहिए। 'तितली' में समाज विकास के लिए जो मार्ग बतलाते है वह उस युग की सर्वाधिक प्रबल भावना थी, और प्रायः हर समाज सुधारक और भारत को एक स्वतंत्र सम्पन्न राष्ट्र का स्वप्न देखनें वाले का शुभ संकल्प भी ''मैं तो समझता हूँ गांवों का सुधार होना चाहिए कुछ पढ़े लिखे सम्पन्न और स्वस्थ लोगों को नागरिकता के प्रलोभनों को छोड़कर देश के गांवों में बिखर जाना चाहिए। उनके सरल जीवन में विश्वास प्रकाश और आनंद का प्रचार होना चाहिए। उनके छोटे–छोटे उत्सवों में स्वाभाविकता, उनकी खेती में सम्पन्नता और चरित्र में सुरूचि उत्पन्न करके उनके दारिद्रय और अभाव को दूर करने की चेष्टा होनी चाहिए इसके लिए सम्पत्तिशालियों को स्वार्थ त्याग करना अत्यन्त आवश्यक है।'' [5] समाजवाद औरक्या है? वस्तुतः प्रसाद ने सामाजिक असमानताओं , कुरीतियों, धार्मिक विसंगतियों और अनाचारों का चित्रण करके जहां इनके प्रति घृणा उत्पन्न की है, वहीं एक नवीन पथ निर्माण की संकल्पना भी प्रदान की है। 'कंकाल' में 'भारत संघ' की स्थापना का उद्देश्य स्मरणीय है ' –'घरों के पर्दे की दीवारों के भीतर नारी–जाति के सुख–स्वास्थ्य और संयम स्वतंत्रता की घोषणा करें। उनमें उन्नति, समानुभूति, क्रियात्मक प्रेरणा का प्रकाश फैलायें। हमारा देश इस सन्देश से, नवयुग के सन्देश से स्वास्थ्य लाभ करे। [6]

राष्ट्र के प्रति जागरण, समाज–सुधार की भावना, राष्ट्र को खोया गौरव पुनः लौटा लाने के लिए बेचैनी प्रसाद के हर नाटक हर उपन्यास का प्रमुख स्वर है। उनके नायक पौरूष से प्रदीप्त आदर्श नायक है जिनके बल पर वह सोये राष्ट्र को जगाना चाहते हैं। विवेकानन्द जैसे आदर्श पुरूष की छाया प्रसाद के साहित्य में सर्वत्र है। ऐसे नायकों से ही उत्थान की आशा की जा सकती है। नवीन और हितकारी सभी परिवर्तनों के वे आग्रही हैं किन्तु जो अमृत तत्व हमारी परम्परा में मौजूद हैं उनको भी स्वीकार किया जाना चाहिए। तितली की निम्न पंक्तियों में जैसे प्रसाद की वाणी में विवेकानन्द बोल रहे हैं 'भारतीय आत्मवाद की समता ही उसे स्थायी बना सकेगी। यान्त्रिक सभ्यता पुरानी होते ही ढीली होकर बेकार हो जायेगी। उसमें प्राण बनाये रखने के लिए व्यावहारिक समता के ढांचे या शरीर में भारतीय आत्मिक साम्य की आवश्यकता कब मानव समाज समझेगा यह विचारने की बात है। मैं मानता हूं कि पश्चिम एक शरीर तैयार कर रहा है किन्तु उसमें प्राण देना पूर्व के आध्यात्मवादियों का काम है। यही पूर्व और पश्चिम का वास्तविक संगम होगा। जिसमें मानवता का स्त्रोत प्रसन्नता में बहा करेगा।'' [7]

प्रसाद समाज की जीर्ण–शीर्ण मान्यताओं पर निर्मम प्रहार करते हैं। समाज की जड़ परम्पराओं को बदलना चाहते हैं। पाखण्ड आडम्बर का विरोध कर निषेध मूलक जीवन धारा को अनौचित्य पूर्ण बतलाते हैं और सहज जीवन का औचित्य स्थापित करते हैं। जातीयता, छुआछूत, मन्दिर प्रवेश जैसी सामाजिक समस्याओं पर भी उनके साहित्य में क्रान्ति की गयी है। वे एक वर्गहीन साम्ययुक्त समाज व्यवस्था के पोषक थे।

वे तो व्यक्ति देवत्व से पूर्ण कर इस धरा को स्वर्ग बनाने की प्रबल आकांक्षी हैं। पृथ्वी अधिक ऐश्वर्य शालिनी और पूर्ण है और देवत्व से ऊँची वस्तु मानवता है। इसी मानवता द्वारा वे इस समग्र विश्व को, धरा का स्वर्ग बनाने के आकांक्षी हैं। वस्तुतः प्रसाद व्यक्ति, समाज और राष्ट्र का सर्वतोभावेन कल्याण चाहते हैं। भारत का स्थान उनकी दृष्टि में उनकी औदार्यमना संस्कृति के कारण अप्रतिम है। उन्हें अपनी जन्मभूमि से अतिशय प्रेम है और यह प्रेम जहां भी अवसर मिलता है प्रखर रूप में प्रकट हुआ है किन्तु इसकी सर्वाधिक तीव्र अभिव्यक्ति प्रसाद के नाटकों के गीतों में हुई है। चाहे वह 'चन्द्रगुप्त' का 'अरूण यह मधुमय देश हमारा है। 'स्कन्द गुप्त' का यह गीत जिसमें भारतीय गौरव का यशगान है –

हिमालय के आंगन में उसे प्रथम किरणों का दे उपहार
ऊषा ने हंस अभिनन्दन किया है पहनाया हीरक हार
जगे हम लगे जगाने विश्व, लोक में फैला फिर आलोक
किसी का हमने छीना नहीं, प्रकृति का रहा पालना यही
हमारी जन्म भूमि थी यही, कहीं से हम आये थे नहीं
थे निछावर कर दे हम सर्वस्व, हमारा प्यारा भारतवष्ज्ञं [8]

प्रसाद का समग्र साहित्य एक महामानव का साहित्य है जिसके हृदय में सर्व–भूत–हित कामना निहित है। उनकी दृष्टि तो ऋर्षि–दृष्टि है, वे भारतीय ऋर्षि दृष्टि जिसमें पृथ्वी को माता और विश्व को परिवार माना जाता है उनमें अतिशय करूणा है जो इस दुनिया के सभी प्राणियों के सुख की आकांक्षा से आप्लावित है। वह तो ऐसा समाज, ऐसे राष्ट्र की कल्पना करते हैं, जहां सभी को समानता और सभी को आनन्द हो। 'कानन कुसुम' की पंक्तियाँ हैं–

जननी जिसकी जन्मभूमि हो
विश्व स्वदेश, मातृ मानव हो, परमपिता अविनाशी हो।
जो अछूत का जगन्नाथ हो, कृषक करों का दृढहल हो।
दुनिया की आँखों का आंसू और मजदूरों का कल हो। [9]

प्रसाद साहित्य लोकजीवन का, लोक धर्म का और लोक कल्याण का अनुपमेय साहित्य है। प्रसाद समय के रूग्ण समाज को ऐतिहासिक सन्दर्भो, भारतीय संस्कृति के मूल्यवान एवं सार्थक विचारों से आशा एवं विश्वास की संजीवनी प्रदान करते हैं। मानव–कल्याण उनकी साधना है एवं मानवता की स्थापना एवं सरंक्षण साध्य है। मानव समाज अपनी समस्याओं के निदान के लिये जब भी प्रसाद–साहित्य की ओर मुड़ेगा उसे हर प्रश्न का निदान

मिलेगा। साहित्य की कसौटी पर प्रसाद–साहित्य खरा कंचन है जिस पर भारतीय साहित्य सदा गौरवान्वित अनुभव करेगा। प्रसाद का कालजयी साहित्य उन्हें उन्हें कालजयी बनाता है। छायावाद का यह आधार स्तम्भ समग्र भारतीय साहित्य का स्वर्ण–शिखर है। जिसके आलोक में भारतीय संस्कृति दीप्तिमान होती है।

संदर्भ संकेत

1. प्रतिध्वनि–प्रसाद ग्रंथावली – भाग 3, लोकभारती प्रकाशन, 15ए, महात्मा गांधी मार्ग, इलाहाबाद
2. कंकाल–प्रसाद ग्रंथावली – भाग 3
3. तितली –प्रसाद ग्रंथावली – भाग 3
4. ध्रुवस्वामिनी–प्रसाद ग्रंथावली – भाग 2
5. तितली –प्रसाद ग्रंथावली – भाग 3
6. कंकाल–प्रसाद ग्रंथावली – भाग 3
7. तितली –प्रसाद ग्रंथावली – भाग 3
8. स्कन्धगुप्त–प्रसाद ग्रंथावली – भाग 2
9. कानन–कुसुम – प्रसाद ग्रंथावली – भाग 1